इकाई 20 वित्तीय और मौद्रिक प्रणाली, कीमतें

इकाई की रूपरेखा

20.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम मुगल कालीन भारत की वित्तीय और मौद्रिक व्यवस्था पर विचार-विमर्श करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- मुगलों द्वारा भू-राजस्व के अतिरिक्त वसूले जाने वाले अन्य करों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे;
- कर वसूल करने के तरीके का उल्लेख कर सकेंगे;
- मौद्रिक व्यवस्था पर प्रकाश डाल सकेंगे; और
- मुगल शासन में कीमतें और उनके उतार-चढ़ाव के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

20.1 प्रस्तावना

जैसा कि हम इकाई 17 में चर्चा कर चुके हैं मुगल कालीन भारत में आय का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्रोत भू-राजस्व था। इसके अतिरिक्त राज्य की आय के कुछ अन्य स्रोत भी थे। इस इकाई के प्रथम भाग में हम इसी पर विचार करेंगे।

समकालीन स्रोतों में भू-राजस्व का तो विस्तार से उल्लेख मिलता है परन्तु अन्य करों का उल्लेख सुस्पष्टता और विस्तार से नहीं किया गया है।

दूसरे भाग में हम मौद्रिक व्यवस्था की चर्चा करेंगे। मुगलों की धातु मुद्रा की व्यवस्था काफी विकसित थी। इस काल में सोने, चांदी और तांबे के सिक्के ढाले गये। यहां हम विभिन्न मुद्राओं के तुलनात्मक मूल्य, ढलाई की व्यवस्था और टकसालों की अवस्थिति पर विचार करेंगे।

तीसरे भाग में हम मूल्यों का विश्लेषण करेंगे। अन्य बातों के अलावा, हम इस काल के उत्पादन और वाणिज्यिक गतिविधियों पर मूल्यों के उतार-चढ़ाव के पड़ने वाले प्रभावों पर भी विचार करेंगे।

20.2 वित्तीय व्यवस्था

साम्राज्य की कुल आय में भू-राजस्व के अतिरिक्त अन्य करों के योगदान का ठीक-ठीक ब्योरा देना बहुत कठिन है। शीरीन मूसवी के अनुसार गुजरात और आगरा **सूबे** (प्रांत) में यह क्रमशः 18 प्रतिशत और 15 प्रतिशत के आसपास था जबकि अन्य **सूबों** में यह 5 प्रतिशत से भी कम था। **(Economy of the Mughal Empire)**

यहां हम विभिन्न करों के बारे में विस्तार से चर्चा नहीं करेंगे। हम अपनी चर्चा इन करों के स्वरूप और इन्हें वसूल करने के तरीके तक सीमित रखेंगे।

2.2.1 भू-राजस्व के अतिरिक्त अन्य कर

हस्तशिल्प उत्पादन पर कर, बाजार कर, अंतःराष्ट्रीय और **अतर्राष्ट्रीय** दोनों तरह के व्यापारों पर सीमा शुल्क और **राहदारी** (पथकर) और सिक्कों की ढलाई पर कर आय के मुख्य स्रोत थे। इनके अलावा युद्ध की लूट, **नजरानों** और भेंटों से भी राजकोष समृद्ध होता था।

बाजार में बेची जाने वाली लगभग सभी वस्तुओं पर कर लगता था। इनमें कपड़ा, चमड़ा, अनाज, पशु आदि प्रमुख हैं। कोई चीज जितनी बार बेची जाती थी उस पर उतनी बार कुछ कर देना होता था। हमारे पास कराधान की सही सही दर को गणना करने के लिए पर्याप्त आंकड़े उपलब्ध नहीं है। आमतौर पर जो उल्लेख मिलता है उससे लगता है कि ये कर काफी ज्यादा थे। पीटर मंडी (1632) के विवरण के अनुसार, पटना का राज्यपाल कर वसूलने में बहुत निर्ममता बरतता था, और यहां तक कि दूध बेचने वाली औरतों से भी कर वसूल किया जाता था।' एक अन्य समकालीन लेखक ने भी लिखा है कि फूल बेचने वाले से लेकर मिट्टी का बर्तन बेचने वाले तक, अच्छी कोटी का मलमल बनाने वालों से लेकर मोटा कपड़ा बनाने वालों तक को, हर तरह के व्यापारी को कर देना पड़ता था।

व्यापारियों के अलावा कारीगरों को भी अपने उत्पादन पर कर देना पड़ता था। सभी प्रकार के कपड़ों, रेशम और ऊनी वस्त्र पर **कटरापार्चा** कर लगाया जाता था। नील, शोरा और नमक पर भी कर लगाया जाता था। कुछ मामलों में, जैसे कि अकबर के समय में पंजाब में नमक पर लगाया गया कर उसकी मूल लागत के दोगुना से भी ज्यादा था।

सीमा शुल्क और पारगमन शुल्क

जब कोई वस्तु एक जगह से दूसरी जगह ले जाई जाती थी तब उस पर कर लगाया जाता था। हमें सीमा शुल्क दरों की थोड़ी बहुत जानकारी मिलती है। बंदरगाहों से लाई जाने वाली प्रत्येक वस्तु पर कर लगाया जाता था। अबुल फजल के अनुसार अकबर के समय में इस प्रकार के शुल्क ढाई प्रतिशत से ज्यादा नहीं लगाए जाते थे। सत्रहंवी शताब्दी के आरंभ के एक दस्तावेज में बताया गया है कि वस्तुओं पर ढाई प्रतिशत, खाद्य सामग्री पर तीन प्रतिशत और धन (सोना और चांदी) पर दो प्रतिशत कर लगाया जाता था। 17वीं शताब्दी के अंत में सीमा शुल्क चार से पांच प्रतिशत के बीच था।

औरंगजेब ने अलग-अलग समुदायों पर अलग-अलग पारगमन कर लगया था। यह दर मुसलमानों के लिए ढाई प्रतिशत, हिंदुओं के लिए पांच प्रतिशत और विदेशियों के लिए साढ़े तीन प्रतिशत थी। यह दर पूरे साम्राज्य में लागू थी।

52 रुपए से कम मूल्य की वस्तु कर से मुक्त होती थी। कुछ समय के लिए औरंगजेब ने मुसलमानों को सभी सीमा शुल्कों से मुक्त कर दिया परन्तु जल्द ही उसने फिर उन पर ढाई प्रतिशत कर लगा दिया।

सम्राट के निर्देशों के बावजूद व्यापारियों से अक्सर निर्धारित सीमा शुल्क से ज्यादा राशि वसूल कर ली जाती थी। हमें सीमा शुल्क के बारे में विदेशियों की शिकायतों का पता चलता है। अंग्रेजों ने 1615ई. में, शिकायत की थी कि अहमदाबाद से सूरत तक वस्तुओं को लाने में तीन बार अलग-अलग शुल्क वसूला जाता था। समय-समय पर अंग्रेज और डच सीमा शुल्क में छूट प्राप्त करने के लिए सम्राट से **फरमान** प्राप्त किया करते थे फिर भी अक्सर सीमा शुल्क चौकियों पर शुल्क का भुगतान करना पड़ता था। मुगल सीमा क्षेत्र के अतिरिक्त स्वायत्त शासक भी अपने इलाके से गुजरने वाली वस्तुओं पर शुल्क लगाते थे। मोरलैंड कहता है कि व्यापार और वाणिज्य पर करों के बोझ की ठीक-ठीक गणना करना संभव नहीं है क्योंकि सभी अपनी मनमर्जी से कर लगाते थे और शुल्क उगाहते थे। एक राज्य में या क्षेत्र में कर देने के बावजूद व्यापारियों को दूसरे क्षेत्र में पुनः कर देना पड़ता था।

सीमा शुल्क के अलावा **राहदारी** कर या पारगमन शुल्क भी वसूल किया जाता था यह एक प्रकार का पथकर या चुंगी थी। विभिन्न क्षेत्रों से गुजरने वाली वस्तुओं पर यह चुंगी लगायी जाती थी। हालांकि प्रत्येक स्थान पर थोड़ी-थोड़ी राशि ही देनी पड़ती थी परन्तु कुल मिलाकर यह राशि बड़ी हो जाती थी। यहां तक कि अपने क्षेत्र से गुजरने वाली वस्तुओं पर **जमींदार** भी चुंगी वसूला करते थे।

17वीं शताब्दी के एक समकालीन विवरण (खाफी खां) के अनुसार **राहदारी** को अवैध माना जाता था परन्तु इसके नाम पर व्यापारियों और व्यवसायियों से बड़ी मात्रा में राशि वसूल कर ली जाती थी। यह कर नदी मार्गों पर भी लगाया जाता था

टकसाल से आय

टकसाल में लिया जाने वाला शुल्क साम्राज्य के लिए आय का एक अन्य प्रमुख स्रोत था। राज्य द्वारा वसूले गए टकसाल-शुल्क को **महसूल-ए-दारुल जर्ब** कहा जाता था। यह शुल्क कुल ढाली गयी मुद्रा का पांच प्रतिशत था। इसके अतिरिक्त दो अन्य शुल्क भी लिए जाते थे। इन्हें **रुसूम-ए-अहलकारान** (पदाधिकारियों का देय) और **उजरत-ए कारीगरान** (कारीगरों की मजदूरी) कहा जाता था।

20.2.2 वसूली का तरीका

भू-राजस्व के समान करों की वसूली के लिए भी एक सुगठित और व्यवस्थित तंत्र स्थापित किया गया था। साम्राज्य में भू-राजस्व और अन्य करों से हुई आयों का अलग-अलग हिसाब रखने का प्रयत्न किया जाता था। इस दृष्टि से करों को **माल-ओ-जिहात** और **सायर जिहात** में वर्गीकृत किया गया। पहले वाला भू राजस्व से और दूसरा व्यापार और वाणिज्य पर लगाये गये करों से संबद्ध था। कर निर्धारण और वसूली की सुविधा की दृष्टि से **महालात-ए-सायर** या **सायर महाल** नामक राजस्व संबंधी अलग क्षेत्र विभाजन बड़े शहरों और नगरों में किया गया। **महाल** शुद्ध राजस्व क्षेत्र था जो **परगना** (जो राजस्व और क्षेत्रीय विभाजन दोनों था) से भिन्न था।

आइन-ए अकबरी में अहमदाबाद, लाहौर, मुल्तान और भडौंच जैसे क्षेत्रों के लिए **सायर महल** और शहरों के राजस्व आंकड़ों को अलग से दर्ज किया गया है। सत्रहवीं शताब्दी के उपलब्ध राजस्व आंकड़ों में प्रत्येक शहर के **सायर महालों** (राजस्व क्षेत्रों) का उल्लेख अलग से किया गया है। उदाहरण के लिए, सूरत की सूची में दिए गए राजस्व **महालों** में **महाल फर्जा, महाल खुश्की, महाल नमकजार, महाल चबूतरा-ए कोतवाली, महाल दलाली, जौहरी वा मनहारी, महाल दारुल जर्ब, महाल गल्ला मंडी** और **महाल जहाजात** का उल्लेख मिलता है।

ये राजस्व क्षेत्र या तो **जागीर** के रूप में दिये जाते थे अथवा इनका राजस्व वसूल करके राजकोष में सीधे जमा करा दिया जाता था। सीमा शुल्क चौकियां और टकसालों को

छोड़कर अन्य करों को वसूल करने वाले अधिकारियों की पदवी भू-राजस्व पदाधिकारियों के अनुरूप ही होती थी।

बंदरगाहों पर अधिकारियों का एक अलग वर्ग होता था। **मुतसद्दी** बंदरगाह का मुख्य पदाधिकारी या अधीक्षक होता था। उसकी नियुक्ति सीधे सम्राट करता था। कर की वसूली करना उसका काम था। सीमा शुल्क चौकियों में व्यापारियों से बात करके निर्धारित किए गए मूल्यों के आधार पर ही वस्तुओं का बाजार मूल्य तय होता था।

मुतसद्दी के अधीन कई पदाधिकारी कार्यरत होते थे जो सीमा शुल्क लगाने, वसूल करने और खातों के रखरखाव में उसकी सहायता करते थे। इनमें **मुशरिफ**, **तहवीलदार** और **दरोगा-ए-खजाना** प्रमुख है। इन पदाधिकारियों की नियुक्ति भी राजदरबार से होती थी। इन सीमा शुल्क गृहों के अपने कर्मचारी और कुली भी हुआ करते थे।

विस्तृत आंकड़ों के अभाव में कुल वसूली जाने वाली राशि का अनुमान करना कठिन है। शीरीन मूसवी ने प्राप्त आंकड़ों का आकलन करके अनुमान लगाया है कि राज्य की आय में इन करों का योगदान लगभग 10 प्रतिशत के करीब होता था।

बोध प्रश्न 1

1) भूमि कर के अतिरिक्त अन्य मुख्य करों का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

....

....

2) **राहदारी** और सीमा शुल्क किस प्रकार वसूल किया जाता था।

....

....

....

....

....

20.3 मौद्रिक व्यवस्था

मुगलों के शासन काल में मौद्रिक व्यवस्था पूरी तरह सुव्यवस्थित थी। इस समय धातुओं की शुद्धता बनाए रखने में काफी सफलता प्राप्त कर ली गयी थी।

20.3.1 मुद्रा प्रणाली

मुगल मुद्रा व्यवस्था को त्रिपदात्मक कहा जा सकता है। तीन प्रकार के सिक्के ढाले जाते थे, तांबा, चांदी और सोना।

चांदी के सिक्कों का मुगलों से पहले का लंबा इतिहास है। दिल्ली सल्तनत में इसका प्रयोग किया गया और इसे **तनका** कहा गया। शेरशाह ने पहली बार चांदी के सिक्के का मानकीकरण किया। इसे **रुपया** कहा जाता था और इसका वजन 178 ग्रेन (ट्राय) होता था। (ट्राय वज़न मापने की अंग्रेजी प्रणाली थी जिसका प्रयोग सोने, चांदी और बहुमूल्य नगों के संदर्भ में किया जाता था। इसके अनुसार 1 पाउंड = 12 आउन्स = 5760 ग्रेन) ढलाई

करने के लिए सिक्के में अन्य धातु भी मिलाई जाती थी जो सिक्के के कुल वजन के 4 प्रतिशत से अधिक नहीं होती थी। अकबर ने भी लगभग इसी वजन के साथ **रुपया** को आधार मुद्रा के रूप में अपनाया। औरंगजेब के शासन काल में **रुपया** का वजन बढ़कर 180 ग्रेन (ट्राय) हो गया। व्यापार और राजस्व आदि के लिए मुख्य रूप से चांदी के सिक्के का ही उपयोग किया ाता था।

मुगलों ने स्वर्ण मुद्राएं भी जारी की जिसे **अशर्फी** या **मुहर** कहते थे। इसका वजन 169 ग्रेन (ट्राय) होता था। यह सिक्का मुख्य रूप से वाणिज्यिक लेन-देन में काम में नहीं लाया जाता था। इसे मुख्य रूप से संचय निधि के रूप में रखा जाता था और इसे उपहार देने के काम में भी लाया जाता था।

छोटे मोटे लेन देन में प्रयुक्त होने वाला आम सिक्का तांबे का **दाम** था जिसका वजन 323 ग्रेन हुआ करता था। संभवतः तांबे की आपूर्ति में कमी के कारण औरंगजेब के शासनकाल में तांबे के **दाम** का वजन एक तिहाई घटा दिया गया।

तटीय इलाकों में छोटे-मोटे खरीद-फरोख्त के लिए **कौड़ियों** (समुद्री सीपी) का उपयोग किया जाता था। ये मुख्य रूप से मालदीव द्वीपों से लायी जाती थी। लगभग 2500 **कौड़ी** एक **रुपया** के बराबर होती थीं।

चांदी के रुपया के अलावा अन्य प्रकार के सिक्के भी उपयोग में लाए जाते थे। इनमें सबसे महत्वपूर्ण **महमूदी** था जो गुजरात का काफी पुराना चांदी का सिक्का था। यहां तक कि गुजरात में मुगल शासन की स्थापना के बावजूद इसकी ढलाई जारी रही और यह गुजरात में वाणिज्यिक लेन-देन में प्रयुक्त होता रहा।

विजयनगर साम्राज्य में **हूण** या **पगोडा** नामक सोने का सिक्का चला करता था। विजयनगर के विघटन के बाद बीजापुर और गोलकुंडा राज्यों में इसका उपयोग होता रहा। कई दक्खनी राज्यों में तांबे और चांदी की मिश्रधातु का सिक्का **तनका** के नाम से उपयोग में आता रहा। दक्खन में मुगल शासन की स्थापना के बाद उस इलाके में मुगल चांदी के सिक्के की ढलाई के लिए कई टकसाल खोले गये।

सिक्कों का आदान-प्रदान मूल्य

सोना, चांदी और तांबे के सिक्कों का आदान-प्रदान मूल्य बाजार में इन धातुओं की उपलब्धता के आधार पर बदलता रहता था। पूरे मुगल काल में सोने के सिक्के की तुलना में चांदी के सिक्के का मूल्य अधिक ऊपर-नीचे होता रहा। एक सोने के सिक्के का मूल्य 10 से लेकर 14 रुपये तक बदलता रहा।

तांबे के सिक्के के मामले में 1595 को आधार वर्ष बनाकर इरफान हबीब दिखाते हैं कि 1668 ई. तक यह ढाई गुना ऊपर बढ़ा परन्तु 1700 ई. तक आते-आते यह लगभग दोगुना हो गया। (1595 ई. की तुलना में) और फिर 1730 ई. में लगभग 1660 ई. के स्तर पर आ गया।

अकबर के शासन काल में लेन-देन की दृष्टि से 40 तांबे के **दाम** एक **रुपया** के बराबर होते थे। उसकी मृत्यु के बाद तांबे की दर में तेजी से वृद्धि होने के कारण यह अनुपात कायम नहीं रखा जा सका। चूंकि सभी भू-राजस्व निर्धारण और आकलन **दाम** में किए जाते थे अतः इसे रुपया के सिद्धांततः इकाई के रूप में उपयोग में लाना आवश्यक था। छोटे मूल्य के चांदी के सिक्कों को **आना** कहते थे। इसका भी उपयोग किया जाता था। यह रुपये का 1/16वां हिस्सा होता था।

ऊपर हमने जो विवरण दिया है उसमें हमने मुगलों की मौद्रिक व्यवस्था के संबंध में विद्वानों के बीच हुए विवादों और जटिताओं का जिक्र नहीं किया है। यहां हमने सरल ढंग से केवल मुगल मुद्रा प्रणाली की आधारभूत विशेषताओं को स्पष्ट करने की कोशिश की है।

20.3.2 ढलाई व्यवस्था

मुगलों की 'मुक्त-मुद्रा प्रणाली' में बहुमूल्य धातुओं को ढालकर सिक्का बनाया जाता था। केवल राज्य ही सिक्का जारी कर सकता था और कोई अन्य व्यक्ति उसे जारी नहीं कर सकता था। सिक्कों की शुद्धता बनाए रखने के लिए मानकीकरण का कड़ाई से पालन किया जाता था।

पूरे साम्राज्य में कई टकसाल स्थापित किए गए थे। ये टकसाल बड़े शहरों और बंदरगाहों में स्थापित किए गए थे ताकि आयातित बहुमूल्य धातुओं को आसानी से सीधे टकसाल पहुंचाया जा सके। प्रत्येक सिक्के पर ढलाई करने वाले टकसाल, ढलाई का वर्ष और शासक का नाम लिखा होता था। चालू या पिछले वर्ष में ढाले गये नये सिक्कों को **ताजा सिक्का** (नये ढाले गये सिक्के) कहते थे। किसी सम्राट के शासनकाल में जारी और प्रचलित सिक्के की **चलानी** (वर्तमान) कहते थे। जबकि पिछले शासनकाल में ढाले गये सिक्के को **खजाना** के नाम से जाना जाता था। **ताजा** के अलावा अन्य सभी सिक्कों को उनके वास्तविक मूल्य से कम में आंका जाता था।

जारी किए गए वर्ष के बाद के वर्षों में सिक्के के मूल्य से कुछ खास राशि काट ली जाती थी। अगर कोई सिक्का एक वर्ष से अधिक प्रचलन में रहा तो 3 प्रतिशत काटा जाता था और यदि यह 2 वर्ष से ज्यादा पुराना होता था तो 5 प्रतिशत की कटौती की जाती थी।

समय के साथ-साथ सिक्के का वजन घटने पर भी उसके मूल्य में कटौती की जाती थी। अबुल फजल कहता है कि अगर वजन एक रत्ती कम होता था तो इसे नजरअंदाज कर दिया जाता था और सिक्के को मानक माना जाता था। अगर वजन में 1 से 2 रत्ती की कमी आती थी तो ढाई प्रतिशत की कटौती की जाती थी, और अगर यह कमी 2 रत्ती से भी ज्यादा हो जाती थी तो उसे केवल धातु (चांदी) के रूप में देखा जाता था।

इन सभी कटौतियों का निर्णय राज्य करता था परन्तु व्यवहार में **सर्राफ** (मुद्रा की जांच करने वाले) बाजार के आधार पर मनमाने ढंग से कटौतियां किया करते थे।

टकसालों की कार्य पद्धति

सिक्कों की ढलाई का इच्छुक कोई भी व्यक्ति धातु या पुरानी मुद्रा टकसाल लाकर सिक्कों की ढलाई करा सकता था। धातु की गुणवत्ता और शुद्धता जांच की जाती थी। मुद्रा ढालकर व्यक्ति विशेष के सुपुर्द कर दी जाती थी। ढलाई के लिए निश्चित दर पर शुल्क लिया जाता था। ढाली गयी बहुमूल्य धातु का लगभग 5.6 प्रतिशत ढलाई शुल्क लिया जाता था।

इस ढलाई के काम को कई व्यक्ति और दस्तकार मिलकर किया करते थे।

दारोगा ए दारुल जर्ब टकसाल का मुख्य पदाधिकारी होता था। वह टकसाल के सभी कार्यों का समग्र निरीक्षण करता था। कई पदाधिकारी, निपुण कारीगर और कार्मिक उसकी सहायता करते थे। टकसाल द्वारा सर्राफ की नियुक्ति मूल्यांकनकर्ता के रूप की जाती थी। उसे सिक्के की शुद्धता, वजन और समय की जांच करनी और उनका मूल्य निर्धारण कर कटौती की राशि निश्चित करनी होती थी। **मुशरिफ** लेखे की देखरेख करता था। **तहवीलदार** प्रतिदिन के लाभ का हिसाब रखता था और सिक्कों तथा बहुमूल्य धातुओं को सुरक्षित स्थान पर रखता था। **महरकान (ढालने** वाला) सिक्कों को ढालता और खांचे बनाता था। **वजनकश** (वजन लेने वाला व्यक्ति) सिक्कों का वजन जांचता था। इसके अलावा **जराब**, (सिक्का निर्माता), **सिक्काची** (ठप्पा लगाने वाला) आदि कई कारीगर बन टकसालों में काम करते थे।

टकसालों की उत्पादन क्षमता के बारे में ठीक ठीक बताना मुश्किल है क्योंकि यह टकसाल के आकार और उस इलाके की वाणिज्यिक गतिविधियों पर निर्भर करता था जहां टकसाल स्थित होता था। 17वीं शताब्दी के अंतिम वर्षों में सूरत की टकसाल में प्रतिदिन 30,000

सिक्के (**रुपया**) ढाले जाते थे। अज़ीज़ा हासन ने 16वीं-17वीं शताब्दी में सिक्कों को जारी किए जाने के विन्यास की चर्चा की है। उनके अनुसार प्रचलित रुपयों की संख्या 1591 ई. और 1639 ई. के बीच तिगुनी हो गई। 1639 ई. के बाद गिरावट आई और 1684 ई. तक यह 1591 ई. में प्रचलित रुपयों के दुगने तक सीमित रह गया। 1684 के बाद यह पुनः बढ़ने लगी और 1700 ई. में कुल संख्या 1591 ई. की तुलना में तिगुनी हो गई।

टकसालों की अवस्थिति

अबुल फजल ने **आइन-ए अकबरी** में टकसालों की एक सूची दी है। उसके अनुसार बयालीस टकसालों में तांबे के सिक्के, चौदह में चांदी के सिक्के और चार में सोने के सिक्के ढाले जाते थे। 17वीं साताब्दी के अंत तक चांदी के सिक्के ढालने वाली टकसालों की संख्या बढ़कर चालीस हो गई।

एम.पी. सिंह ने कई मुद्रा संबंधी स्रोतों के आधार पर टकसालों की एक विस्तृत सूची बनाई है। उनके अनुसार बहुत से सिक्कों पर टंकित टकसालों के नाम न तो **आइन-ए अकबरी** में और न ही किसी अन्य साहित्यिक स्रोत में मिलते है। हम उनके द्वारा बनाई गई सूची नीचे प्रस्तुत कर रहे हैं।

शासन काल	सोना चांदी और तांबा को ढालने वाली टकसाल	केवल सोने का सिक्का बनाने वाली टकसाल	केवल सोना और चांदी के सिक्के ढालने वाली टकसाल	सोना और तांबे के सिक्के ढालने वाली टकसाल	चांदी के सिक्के ढालने वाली टकसाल	चांदी और तांबा के सिक्के ढालने वाली टकसाल	केवल तांबे का सिक्का ढालने वाली टकसाल	कुल
अकबर	13	4	3	—	14	14	35	**83**
जहांगीर	6	2	7	—	11	3	3	**32**
शाहजहां	19	1	12	—	33	—	5	**41**
औरंगजेब	19	1	34	—	36	3	3	**85**

स्रोत : एम.पी. सिंह, **टाउन मार्केट, मिंट एंड पोर्ट इन द मुगल अम्पायर**, पृष्ठ 173, 1985, दिल्ली।

20.4 कीमतें

आइन-ए अकबरी में कई प्रकार की वस्तुओं के मूल्यों की सूचियां उपलब्ध हैं। ये मुख्य रूप से 16वीं शताब्दी के अंत के आगरा के आसपास के मूल्य से संबद्ध हैं। तुलना करने के लिए आगे के वर्षों के मूल्यों का कोई व्यवस्थित ब्योरा उपलब्ध नहीं है।

17वीं शताब्दी के दौरान साम्राज्य के विभिन्न क्षेत्रों और अलग-अलग वर्षों में कुछ वस्तुओं के मूल्यों के बारे में कुछ बिखरी हुई जानकारी मिलती है। इस स्थिति में पूरे मुगल काल में विभिन्न वस्तुओं के मूल्यों में उतार-चढ़ाव की निश्चित प्रवृत्ति को पहचान पाना बहुत कठिन है। इरफान हबीब ने 16वीं-17वीं शताब्दी के दौरान मूल्यों के उतार-चढ़ाव का अध्ययन किया है। (**कैम्ब्रिज इकॉनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इन्डिया**, खंड 1) हम नीचे इरफान हबीब द्वारा किए गये इस अध्ययन का संक्षेप में उल्लेख करने जा रहे हैं।

सोना, चांदी और तांबा

हमने 20.3.1 उपभाग में इन धातुओं के तुलनात्मक मूल्यों का उल्लेख किया था। 1580 के आसपास सोने और चांदी का अनुपात 1:9 था। 1670 ई. के बाद कई उतार चढ़ाव आए और यह अनुपात 1:16 हो गया। परन्तु 1750 ई. तक यह पुनः 1:14 हो गया।

16वीं शताब्दी के अंत से 1660 ई. तक आते-आते तांबे के सिक्कों का चांदी में मूल्य 2.5 गुना बढ़ गया। 1700 ई. तक यह नीचे गिरकर 16वीं शताब्दी के मूल्य का दोगुना हो गया। एक बार फिर 1750 ई. में यह 1660 ई. के स्तर पर पहुंच गया।

कृषी उत्पाद

खाद्यान्नों के मूल्यों के विश्लेषण में सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि इनके मूल्यों में कई प्रकार के उतार-चढ़ाव होते रहते थे। किसी वर्ष और क्षेत्र में खाद्यान्नों का मूल्य उस क्षेत्र में उसके उत्पादन से निर्धारित होता था। इसके अतिरिक्त उस वर्ष हुई उपज से भी इनका मूल्य निर्धारित होता था। एक ही समय में एक ही वस्तु का दो स्थानों पर अलग-अलग मूल्य हो सकता था। यह उत्पादन स्थल से बाजार की दूरी पर भी निर्भर करता था। **आइन-एअकबरी** में उल्लिखित कुछ अनाजों के मूल्यों को नीचे दर्शाया जा रहा है:

गेहूं प्रति मन	12 दाम	सादा धान प्रति मन	100 दाम
काला चना प्रति मन	8 दाम	देवजीरा चावल प्रति मन	90 दाम
मसूर चना प्रति मन	12 दाम	साथी चावल प्रति मन	20 दाम
जौ प्रति मन	8 दाम	उर्द दाल प्रति मन	16 दाम
मोठ प्रति मन	12 दाम	मूंग दाल प्रति मन	18 दाम

1595 ई. और 1637 ई. के बीच अनाजों के मूल्य में दोगुनी वृद्धि हुई। 1637 ई. और 1670 ई. के बीच 15 से 20 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी हुई। 1670 ई. तक मूल्य 1595 ई. की तुलना में 230 प्रतिशत बढ़ गये। पूर्वी राजस्थान का व्यवस्थित आंकड़ा उपलब्ध है। यहां 1660 ई. और 1690 ई. के बीच कृषीय मूल्यों में मामूली वृद्धि पाई जाती है लेकिन 18वीं शताब्दी के दूसरे दशक में इसमें तेजी से वृद्धि हुई। इसके बाद 1690 ई. की तुलना में उनका मूल्य दोगुना से भी ज्यादा रहा।

चीनी और नील

चीनी और नील मुगल कालीन भारत की दो प्रमुख नगदी फसलें थीं। उत्तर भारत में 1615 ई. तक चीनी के मूल्य में न के बराबर वृद्धि हुई। 1630 ई. तक इसमें 140 प्रतिशत की वृद्धि हुई और 1650 ई. तक यह बढ़ोत्तरी कायम रही, जबकि गुजरात में 1620 ई. तक चीनी का मूल्य दोगुना हो गया था।

नील के दो प्रमुख प्रकारों-बयाना नील और सरखेज नील के मूल्यों में अलग-अलग ढंग से उतार-चढ़ाव हुआ। **आइन-ए अकबरी** (1595 ई.) में बयाना नील का मूल 16 रुपये प्रति मन बताया गया है। 17वीं शताब्दी के प्रथम 25 वर्षों तक मूल्य लगभग इसी स्तर पर टिके रहे। 1630 ई. में इसमें अचानक वृद्धि हुई और कुछ समय बाद इसके मूल्य में गिरावट आ गई, फिर भी 1620 ई. के मूल्य से यह मूल्य काफी अधिक था। 1660 ई. में एक बार फिर तेजी से वृद्धि हुई, थोड़े समय बाद इसमें गिरावट आई परन्तु 1595 ई. की तुलना में यह मूल्य तिगुना था।

1620 ई. तक सरखेज नील का मूल्य डेढ़ गुना बढ़ गया। 1630 ई. में इसमें तेजी से वृद्धि हुई और 1640 ई. में गिरावट आई लेकिन 1595 ई. की तुलना में यह मूल्य दोगुना था। नील के मूल्य में उतार-चढाव विदेशी मांग से भी प्रभावित होता था।

वेतन और मजदूरी

आइन-ए अकबरी में कई प्रकार के मजदूरों की मजदूरी का उल्लेख मिलता है। 17वीं शताब्दी के लिए ऐसा कोई आंकड़ा उपलब्ध नहीं है। अतः इस पूरे काल की मजदूरी दर की प्रवृत्ति को आंक पाना कठिन है। 17वीं शताब्दी के इधर-उधर फैले आंकड़ों को देखने से पता चलता है कि 1637 ई. तक 67 से 100 प्रतिशत तक वृद्धि हो चुकी थी, परन्तु इनके आधार पर कोई निश्चित निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है।

बोध प्रश्न 2

1) मुगलों के अधीन सिक्का ढालने की व्यवस्था पर पांच पंक्तियां लिखिए।

....

....

....

....

....

2) टकसालों के प्रबंधन पर पांच पंक्तियां लिखिए।

....

....

....

....

....

3) 17वीं शताब्दी के दौरान मूल्यों के उतार-चढ़ाव पर संक्षेप में टिप्पणी कीजिए।

....

....

....

....

....

20.5 सारांश

इस इकाई में हमने यह बताने की कोशिश की कि भू-राजस्व के अलावा राज्य की आय के और भी कई स्रोत थे। यह आय बाजार कर, सीमा शुल्क, **राहदारी,** सिक्का ढलाई शुल्क, आदि के माध्यम से होती थी।

मुगल मुद्रा प्रणाली त्रिपदीय थी अर्थात् इसमें सोने, चांदी और तांबे के सिक्के का उपयोग होता था। मुगल मुद्रा प्रणाली मुक्त थी और कोई भी व्यक्ति बहुमूल्य धातु लेकर टकसाल से सिक्के बनवा सकता था। पूरे सामाज्य में टकसाल स्थापित किए गए थे। इमसें शुद्धता और मानकीकरण के ऊंचे मानदंड का कड़ाई से पालन किया जाता था।

डेढ़ सौ वर्षों में मूल्य चार गुना बढ़ गए। प्रति वर्ष मूल्यों की वृद्धि दर लगभग 1.9 प्रतिशत थी। मजदूरी संबंधी परिमाणात्मक आंकड़े काफी कम उपलब्ध हैं। हमें मजदूरी के बारे में विस्तार से जानकारी **आइन-ए अकबरी** (1595) में मिलती है।

20.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आप इसमें चुंगी कर, टकसाल शुल्क, उत्पाद शुल्क आदि का उल्लेख कर सकते हैं। देखिए उपभाग 20.2.1

2) देखिए उपभाग 20.2.2

बोध प्रश्न 2

1) मुगलों की मुद्रा बनाने की व्यवस्था मुक्त थी। यह त्रिपदीय मुद्रा प्रणाली थी। देखिए उपभाग 20.3.1 और 20.3.2

2) आप इसमें टकसालों के अधिकारियों और उनकी कार्य पद्धति का उल्लेख कर सकते हैं। देखिए उपभाग 20.3.2

3) देखिए भाग 20.4

इस खंड के लिए कुछ उपयोगी पुस्तकें

इरफान हबीब, **मुगलकालीन भारत की कृषि व्यवस्था 1556-1707**
जी.डी. शर्मा, **मध्यकालीन भारतीय सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थायें**
तपनराय चौधरी, एवं इरफान हबीब, **द कैम्ब्रिज इकानॉमिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया,** भाग-1
एच. फुकाज़ावा, **द मिडिवल डैकन : पेर्जेंट्स, सोशल सिस्टम्स एंड स्टेट्स 16 टू 18 सैंचुरी**
एच.के. शेखानी, पी.एम. जोशी, **हिस्ट्री ऑफ मिडिवल डैकन** (1295-1724) भाग-2
एच.सी. वर्मा, **मध्यकालीन भारत**